वर्तमान परिवेश में काव्य प्रयोजनों की प्रासंगिकता

डॉ0 विनय कुमार त्रिपाठी

विभागाध्यक्ष (साहित्य विभाग)
श्री गौरीशंकर संस्कृत महाविद्यालय
सुजानगंज, जौनपुर (उ0प्र0)

प्राचीन एवं नवीन परम्पराओं में काव्य के सर्जना का मूल्य उददे्श्य क्या था और आज क्या है? यह बड़ा ही व्यापक प्रश्न है। बिना उद्देश्य के तो मूर्ख व्यक्ति भी कोई कार्य करने में प्रवृत्त नहीं होता। तो ब्रम्हानन्द सहोदर इस काव्यानन्द का कोई न कोई विशेष प्रयोजन होना नितान्त आवश्यक है।

वस्तुतः काव्य प्रयोजनों का प्रणयन तो नाट्यशास्त्र के प्रणेता आचार्य भरत मुनि द्वारा संकेतित धर्म, यश, आयुष्य, लोकोपदेशजनन तथा विश्रान्तिजनन आदि प्रयोजन को देकर प्रारम्भ कर दिया गया।[1]

आचार्य भामह ने काव्यालंकार में काव्य के प्रयोजन के रूप में पुरूषार्थ–चतुष्टय की सिध्दि, कलाओं में वैचक्षण्य, कीर्ति एवं प्रीति को काव्य का प्रयोजन स्वीकार किया है।[2]

इसी क्रम में यदि हम आचार्य विश्वनाथ के काव्य प्रयोजन को देखे तो कोई गलत नहीं होगा क्योंकि इन सभी का ही अनुशीलन हो सकता है कि आचार्य विश्वनाथ जी अपने काव्य प्रयोजन चतुर्वर्ग की फल प्राप्ति काव्य के द्वारा मन्द बुध्दि के लोगों को भी हो जाती है में किया हो। वस्तुतः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति वेद इत्यादि से भी सम्भव है किन्तु मनुष्य का स्वभाव है कि वह सरल एवं सुगम, सरस कार्य को करना चाहता है। इसलिए वह काव्य के माध्यम से इन पुरूषार्थों की प्राप्ति अपेक्षित करता है। किन्तु यदि आज के परिवेश में देखा जाय तो काव्य के माध्यम से न तो धर्म मिल रहा है, न अर्थ और काम मिल रहा है। मोक्ष जैसे मुक्तावस्था की प्राप्ति तो अत्यन्त कठिन है।

यदि हम वर्तमान परिपेक्ष में धर्म की बात करें तो आज लोग अपनें–अपनें सम्प्रदाय के अनुसार काव्यों का प्रणयन कर अलग–अलग धर्म की प्राप्ति की बातें करते हैं। जिससे आज हमारा समाज साम्प्रदायिक तत्वों से घिर गया है। हम अपने समाज में मानवता नामक दीपक को जलाने में असमर्थ होते दिखाई पड़ रहें हैं। वस्तुतः काव्य मानव जीवन की सार्थकता का सर्वोत्तम सोपान है। अतएव वेदों से लेकर आज के विभिन्न आधुनिक आचार्यों, कवियों एवं सहृदय समीक्षकों ने कवित्व की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। संसार में मनुष्य का जन्म पाना ही दुर्लभ है। मनुष्य जन्म पाकर भी कवित्व पाना और कवित्व पाकर भी नवनवोंन्मेषशालिनी प्रतिभा पाना दुष्कर है।[3]

Scanned with CamScanner

अग्निपुराण के इस मन्तव्य से कवित्व की महिमा स्पष्ट हो जाती है। किन्तु आज की मानव जाति धर्म, आदि से बधकर वह धर्मगत होकर एवं जातिगत होकर काव्यों का निर्माण कर समाज को बाटनें का प्रयोजन सिध्द कर रहा है। वस्तुतः कवि चन्द्रमां एवं दीपक के समान होता है जैसे चन्द्रमां स्वयं उस चांदनी का सुख नहीं प्राप्त कर पाता और दीपक भी अपने प्रकाश की आभा दूसरों को ही देता है। उसी प्रकार कवि भी अपने काव्य के माध्यम से व्यवहार का ज्ञान पाठकों को ही देता है न कि स्वयं। इस प्रकार की काव्य रचना विभिन्न कुरीतियों में फंसकर समाज को पथ भ्रष्ट कर रही है।

यदि हम वर्तमान परिपेक्ष में धर्म की बात करें तो आज लोग अपनें–अपनें सम्प्रदाय के अनुसार काव्यों का प्रणयन कर अलग–अलग धर्म की प्राप्ति की बातें करते हैं। जिससे आज हमारा समाज साम्प्रदायिक तत्वों से घिर गया है। हम अपने समाज में मानवता नामक दीपक को जलाने में असमर्थ होते दिखाई पड़ रहें हैं। वस्तुतः काव्य मानव जीवन की सार्थकता का सर्वोत्तम सोपान है।

पुनः बात हम अर्थ और काम की करे तो आज काव्य के माध्यम से अर्थ और कामनाओं की पूर्ति ये दोनों सम्भव नहीं है। क्योंकि आज न तो शाहजहां जैसे राजा हैं और न पण्डितराज जगनाथ जैसे कवि। यदि हम मोक्ष जैसे प्रयोजन की बात करें तो वह भी चिन्तनीय है क्योंकि प्रो0 राधाबल्लभ त्रिपाठी जी ने अभिनव काव्यालंकार सूत्रम् में मुक्तिस्तस्य प्रयोजनम् कहते हुए मुक्ति अथवा मोक्ष को ही काव्य रचना का प्रयोजन बताया। परन्तु उनका यह मन्तव्य लोक एवं शास्त्र दोनों के विरूध्द प्रतीत होती है। यह अनुभव सिध्द भी नहीं है। आचार्य भरत ने तो त्रिवर्ग सधनम् नाट्यम् कहकर काव्य से प्रत्यक्षतः तो तीन ही की सिध्दी होती हैं मोक्ष की नहीं।

आज के युग में इन पारम्परिक काव्य प्रयोजनों की समीक्षा आवश्यक प्रतीत होती है। क्योंकि अब वे सामाजिक परिस्थितियॉ तथा मूल्य नहीं रहे। शासन प्रणाली भी बदल गयी। राजतंत्र का स्थान लोकतंत्र ने ले लिया है। भारतीय धर्मशास्त्र ने राजा को दैवी आस्था से श्री मण्डित धोषित किया था, परन्तु आज के शासकों (सांसदों मंत्रियों) को कोई भी धर्मशास्त्र दैवी कला से युक्त नहीं मानेगा। आज के सांसदों मंत्रियों में इस काव्यगत रोचकता में किसी भी प्रकार की कोई रूचि भी दृष्टिगोचर नहीं होती है।

आचार्य वामन ने काव्य प्रयोजन के रूप में मात्र प्रीति एवं कीर्ति को स्वीकार किया है।[4] कीर्ति परमाह्लाद, तथा गुरू, राजा एवं देवता का अनुग्रह आदि अनेक प्रयोजन वाला होता है काव्य। ऐसा प्रतिपादित करने वाले पण्डितराज जगन्नाथ की कीर्ति, परमानन्द एवं त्रिविध अनुकम्पा को काव्य प्रयोजन मानते हैं।[5]

ध्वनिकार आनन्दवर्धन ने भी सह्रदयों के ह्रदयों का आह्लादन करने वाले शब्दों एवं अर्थों से समनुगत होना ही काव्यत्व है। और ह्रदयाहलादन ही काव्य का प्रयोजन है। आचार्य वाणभट् ने कहा कि हम तो एक मात्र कीर्ति को ही काव्य प्रयोजनतया स्वीकार करते हैं। इसी प्रकार आचार्य मम्मट ने भी काव्य से यश प्राप्ति, अर्थ प्राप्ति, लोक व्यवहार का ज्ञान,

Scanned with CamScanner

शिवेतर अर्थात् अमंगल की क्षति नाश सधः परनिवृति तत्काल ही आनन्द की प्राप्ति तथा कान्ता सम्मित उपदेश।[6] रीतिकालीन हिन्दी कवि देव के अनुसार यश ही काव्य का प्रयोजन है। इसी प्रकार राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त ने केवल मनोरंजन कवि का कर्म होना चाहिए। उसे उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए। इन काव्य प्रयोजनों के माध्यम से हम पूर्व कालिक उद्देश्यों की पूर्ति मान सकते हैं। लेकिन आधुनिक परिवेश में यह कहीं न कहीं संकुचित होता हुआ दिखाई पड़ रहा है। नवयुगीन काव्यशास्त्रीय आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी तो काव्य का कोई प्रयोजन भी नहीं मानते उनकी दृष्टि में काव्य कवि का सहज कर्म है। वस्तुतः परमार्थतः तो काव्य का कोई प्रयोजन नहीं होता स्वभावज कविकर्म होने के कारण काव्य का निर्माण होता है। रामचरितमानसकार कवि तुलसीदास जी नें भी अपनें ग्रन्थ में कहा कि हम इस राम के चरित्र की गाथा स्वान्तःसुखाय हेतु कर रहे हैं।[7] इसी प्रकार यदि हम आचार्य राजेन्द्र मिश्र के काव्य प्रयोजन को स्पष्ट करें तो उनका भी अभिमत है। कि यह कवि न धन के लिए, न ही पुण्य लाभ के लिए और न ही व्यवहारिक ज्ञान के लिए और न ही तात्कालिक आनन्द प्राप्ति के लिए काव्य का प्रणयन करता है। वस्तुतः यह काव्य रचना उसका पूर्वजन्म में संस्कारों से प्रबुद्ध स्वभावज कर्म है। जिसे न सम्पन्न कर वह क्षण भर भी शान्ति का अनुभव नहीं कर सकता। इस परिपेक्ष में उदाहरण देते हुए कहा कि जैसे बिना गुन्जन प्रकट किए भ्रमर उड़ पाने में समर्थ नहीं होता। वह गुनगुनाते हुए ही उड़ता है। उसी प्रकार वह कवि भी कवि कर्म के बिना जी नहीं सकता। इसलिए मैं इस काव्य को निसर्गजात कविकर्म मानता हूं। जो कि जन्म जन्मान्तर से प्राप्त होने वाले दिव्य संस्कारों का श्रेष्ठ फल है।[8]

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1–धर्म्यं यशस्यमायुष्यं हितं बुध्दिविवर्धनम्।
लोकोपदेशजननं नाट्यमेतद् भविष्यति।। नाट्य–1.113–15
2–धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।
करोति कीर्तिं प्रीतिश्च साधु काव्य निवेषणम्–काव्यालंकार
3–नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा । अग्निपुराण–337–3
4–काव्यं सद्दृष्टार्थ प्रीति कीर्ति हेतुत्वात्–काव्या
5–तत्र कीर्ति परमाह्लादगुरू राजदेवताप्रसादाधनेक प्रयोजनकस्य काव्यास्य –रसगंगाधर
6–काव्यं यशसे अर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतवे।
सघः परनिवृर्तयें कान्तासम्मिततयो पदेशयुजे। काव्य प्रकाश –1.2
7–स्वन्तः सुखाय रघुनाथ गाथा
8–संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्य शास्त्र–पृष्ठ– 190

Scanned with CamScanner